# अपरिग्रह परमोधर्मः

–डॉ. सोहनलाल गाँधी

## अहिंसा एवं अपरिग्रह

जैन दर्शन के तीन महत्वपूर्ण सिद्धान्त हैं – अहिंसा, अनेकान्त एवं अपरिग्रह । इनमें अहिंसा का सिद्धान्त सर्वोपरि है । 'अहिंसा परमोधर्मः' का घोष हम निरन्तर सुनते आ रहे हैं । भगवान महावीर ने समाज में व्याप्त हिंसा, असत्य, चोरी, मैथुन और परिग्रह आदि सामाजिक बुराइयों से निवृत्त होने के लिए अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह – इन पाँच महाव्रतों का प्रतिपादन किया । चार अन्य महाव्रत – सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह भी अहिंसा व्रत के मजबूती से पालन कराने के लिए ही निर्धारित किए गए थे । महाव्रत मुनिचर्या के लिए प्रतिपादित किए गए क्योंकि मुनि जीवन का मुख्य लक्ष्य मोक्ष होता है किन्तु मुनि समुदाय वृहत समाज की बहुत छोटी इकाई है । ग्रहस्थों की संख्या अरबों में होती है और सामाजिक सौष्ठव व उनके आचरण पर निर्भर करता है । अतः ग्रहस्थों (श्रावक– श्राविकाओं) के लिए उन्होंने इन्हीं पाँच महाव्रतों पर आधारित बारह आयामी अणुव्रत आचार संहिता का निर्माण किया जिन पर हम इस आलेख के आगे के भाग में विचार करेंगे । सबसे पहले आज की समस्याओं के सन्दर्भ में हमें अहिंसा पर विचार करना होगा ।

आगमों में अहिंसा के कल्याणकारी स्वरूप की सुन्दर व्याख्या की गई है – "*अहिंसा प्राणियों के लिए वैसे ही आधारभूत है, जैसे डरे हुए मनुष्य के लिए शरण, पक्षियों के लिए गगन, प्यासों के लिए जल, भूखों के लिए भोजन, समुद्र में डूबते हुए मनुष्यों के लिए नौका, चतुष्पदों के लिए आश्रम, रोगियों के लिए औषध और जंगल को पार करने के लिए सार्थगमन (संघबद्ध यात्रा) ।*" अहिंसा सबसे मूल्यवान् इसलिए है क्योंकि वह त्रस एवं स्थावर – सभी प्राणियों के लिए क्षेमकारी है, कल्याणकारी है तथा पर्यावरण की सभी समस्याओं का समाधान इसमें निहित है । लेकिन जब हम अहिंसा की गहराई में जाते हैं और हिंसा के मूल के बारे में सोचते हैं तो एक निर्विवाद तथ्य सामने आता है कि परिग्रह ही हिंसा का मूल है । तत्वार्थ सूत्र में परिग्रह को मूर्च्छा कहा गया है जिसका अर्थ है किसी भी वस्तु के प्रति ममत्व या आसक्ति का भाव रखना । इस पृथ्वी पर जड़ एवं चेतन, छोटे–बड़े अनेक पदार्थ हैं । उनमें यह संसारी प्राणी मोह या रागवश स्वामित्व या मालिकीपन की कल्पना करता रहता है । जब वह मनचाहा पदार्थ प्राप्त करता है तो उसे हर्ष की अनुभूति होती है और जब वह पदार्थ उसके हाथ से छिन जाता है या जब उसकी चोरी हो जाती है तो वह दुःख की अनुभूति करता है । भौतिक पदार्थों के स्वामित्व के लिए न केवल व्यक्तियों में अपितु राष्ट्रों में भी संघर्ष होता है । यह मूर्च्छा का भाव केवल जड़–चेतन वस्तुओं तक ही सीमित नहीं होता किन्तु अपने विचारों, सिद्धान्तों एवं भावनाओं के प्रति भी इतना सघन होता है कि व्यक्ति अपने से भिन्न सिद्धान्त और विचार सुनने के लिए तैयार ही नहीं होता । पूंजीवाद एवं साम्यवाद पर आधारित राजनैतिक व्यवस्था ने पूरे विश्व को दो समूहों में विभाजित कर दिया। शीत युद्ध से तनाव एवं भय का वातावरण बन गया । निरन्तर युद्ध के बादल मण्डराने लगे और विश्व पटल पर नाजिवाद के अभ्युदय से सम्पूर्ण विश्व को द्वितीय विश्व युद्ध में धकेल दिया गया जिसकी परिणति हिरोशिमा एवं नागासाकी आणविक त्रासदी के रूप में हुई । जब हम मूर्च्छा की व्याख्या करते हैं तो उसके व्यापक अर्थ में धन अर्जित करना, धन की रक्षा करना, पशु सम्पत्ति, बहुमूल्य वस्तुएँ आदि उसकी परिधि में तो आते ही हैं लेकिन वासनाओं एवं कषायों को मन में पोषित करना भी एक तरह से भावनात्मक मूर्च्छा है । वस्तुतः मूर्च्छा मन की दशा है। किसी व्यक्ति के पास भले ही वास्तव में मूल्यवान् पदार्थ न भी हो किन्तु यदि वह निरन्तर उनकी चाह रखता है तथा स्वामित्व की इच्छा करता है तो भी इसे परिग्रह के प्रति मूर्च्छा का भाव ही माना जावेगा । मूर्च्छा का अभाव ही अपरिग्रह का मानदण्ड है । लेकिन आत्मा के आन्तरिक गुण जैसे 'ज्ञान एवं अंतर्दृष्टि' परिग्रह के भाव से मुक्त है । अपनत्व का

भाव, 'मेरा' होने का भाव हिंसा, झूठ एवं चोरी का कारण बनता है । भगवान महावीर ने कहा – *'जो व्यक्ति चेतन एवं अचेतन पदार्थों में किंचित भी ममत्व रखता है, दूसरों के परिग्रह का अनुमोदन करता है, वह दुःख से मुक्त नहीं हो सकता /* परिग्रह से लोभ की वृत्ति गहनतम हो जाती है । कैलाश पर्वत के समान सोने और चाँदी के असंख्य पर्वत हो जाएँ तो भी लोभी पुरुष को उनसे कुछ नहीं होता क्योंकि इच्छा आकाश के समान अनन्त है । उसकी इच्छापूर्त्ति के लिए सम्पूर्ण संसार में विद्यमान अनाज, सोना, पशु भी पर्याप्त नहीं है । अतः 'मनुष्य' को तप–अपरिग्रह का आचरण करना चाहिए ।

## परिग्रह की समस्या : वैश्विक परिदृश्य

परिग्रह न केवल हिंसा का मूल है अपितु झूठ, चोरी, कामुकता (अब्रह्मचर्य) का भी प्रमुख कारण है । जाति एवं वर्ण का अहंकार भी वैचारिक परिग्रह की श्रेणी में आता है । व्यक्ति का अपने रंग एवं अपनी जाति की श्रेष्ठता के प्रति गहन आसक्ति (मूर्च्छा) का भाव होता है। हिटलर ने जर्मन नस्ल को विश्व में श्रेष्ठतम घोषित कर अन्य जातियों और विशेषकर यहूदियों पर घोर अत्याचार किए। लाखों यहूदियों को मौत के घाट उतार दिया गया। दक्षिण अफ्रीका में अल्पसंख्यक गोरों की सरकार द्वारा काले रंग के मूल अफ्रीकी नागरिकों पर किए गए हृदय विदारक अत्याचारों से कौन अपरिचित है ? जैन दर्शन में यद्यपि अहिंसा को सर्वश्रेष्ठ मानवीय गुण कहा गया है लेकिन जब हम पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय निम्नीकरण, जलवायु परिवर्तन, गरीबी, पीने के पानी की कमी तथा पृथ्वी पर सभी जीवों को पोषित करने वाले संसाधनों के निरन्तर अवक्षय आदि समस्याओं पर विचार करते हैं तो हम अनुभव करते हैं कि यद्यपि हिंसा हमारे अस्तित्व के लिए गम्भीर खतरा है लेकिन हिंसा का मूल कारण धन एवं भौतिक पदार्थों को प्राप्त करने की कभी तृप्त नहीं होने वाली निरन्तर बढ़ती हुई हमारी इच्छाएँ ही है । दूसरे शब्दों में हिंसा का मूल कारण हमारी परिग्रह की वृत्ति है, असीमित पदार्थ प्राप्त करने की लालसा है । हमारे विकास की अवधारण का आदर्श नमूना अमेरिका का उपभोग पर आधारित प्रतिरूप ही है । परिग्रह भोग की संस्कृति है और अपरिग्रह समत्व की दिशा में बढ़ता कदम है । सम्पूर्ण विश्व परिग्रह (भोग) की संस्कृति की आँधी से त्रस्त है । भोग की संस्कृति का बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के कारण द्रुत गति से वैश्वीकरण हो रहा है । यह विडम्बना ही है कि इस पृथ्वी पर विद्यमान संसाधनों का 85 प्रतिशत उपभोग दुनिया की 15 प्रतिशत आबादी करती है जिन्हें हम विकसित देश कहते हैं । भोग की संस्कृति मानव जाति को इच्छाएँ बढ़ाने तथा अधिक से अधिक उपभोग करने के लिए प्रोत्साहित करती है । संसाधनों को हड़पने की अनियंत्रित स्पर्धा में समाज का वंचित वर्ग निरन्तर हाशिए की ओर जाने के लिए मजबूर है । परिग्रह रूपी मूर्च्छा गरीब एवं अमीर के बीच की खाई को गहरी एवं चौड़ी कर रही है । विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए निर्धारित वर्तमान पाठ्यक्रमों में 'सादा जीवन उच्च विचार' का पाठ गायब है। महावीर और बुद्ध वर्तमान शिक्षा पद्धति में अप्रासंगिक हो गए हैं । युवक–युवतियों का एकमात्र लक्ष्य समृद्धि है, विलासिता है । 'अधिक उपभोग, अधिक उत्पादन' बाजारी संस्कृति का मूलमंत्र है । माँग और पूर्त्ति उपभोग और उत्पादन पर निर्भर है। जहाँ एक ओर भव्य इमारतों एवं बंगलों का जाल फैल रहा है और सड़कें कारों, टैक्सियों एवं बसों के लिए छोटी पड़ गई है, एक ओर व्यक्ति कई कारों एवं भवनों का मालिक बन गया है तो दूसरी ओर विश्व की 85 प्रतिशत आबादी गरीबी की यातना भोग रही है । उनके पास न रहने के लिए मकान है, न खाने के लिए पर्याप्त भोजन, वस्त्र आदि हैं । इस आर्थिक असमानता की खाई पाटना असम्भव है। लोग भगवान महावीर के उपदेश भूल गए हैं । उन्होंने कहा था – *"प्रमत मनुष्य इस लोक में अथवा परलोक में धन से त्राण नहीं पाता । अंधेरी गुफा में जिसका दीपक बुझ गया हो, उसकी भांति अनन्त मोह वाला प्राणी पार ले जाने वाले मार्ग को देखकर भी नहीं देखता । जो मनुष्य कुमति को स्वीकार कर पापकारी प्रवृत्तियों से धन का उपार्जन करता है । ऐसे लोग धन को छोड़ मौत के मुंह में जाने को तैयार रहते हैं । वे बैर (कर्म) से बंधे हुए मरकर नरक में जाते हैं । अज्ञानी पुरुष ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने की कामना करता है । वह बार–बार सुख की कामना करता है । इस प्रकार वह अपने द्वारा*

*कृत कामना की व्यथा से मूढ़ होकर विपर्याय को प्राप्त होता है – सुख का अर्थी होकर दुःख को प्राप्त करता है ।'*

पदार्थों में सुख की खोज ही पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय असंतुलन का मुख्य कारण है । वर्तमान की दुःखद परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में हमें अब 'अहिंसा परमोधर्म' के स्थान पर 'अपरिग्रह परमोधर्म' कहना होगा । अहिंसा का विकास हिंसा एवं परिग्रह के बीच भेद रेखा को मिटाए बिना सम्भव नहीं है । भगवान महावीर के अनुसार हिंसा एवं परिग्रह को समझे बिना कोई भी व्यक्ति न धर्म जान सकता है, न कैवल्य प्राप्त कर सकता है और न संयम का विकास कर सकता है । जो अहिंसा की चेतना विकसित कर लेता है, वह कभी भी परिग्रही नहीं हो सकता । वर्तमान परिस्थितियों में हमारा ध्यान अपरिग्रह पर केद्रित होना चाहिए, अहिंसा को दूसरा स्थान दिया जाना चाहिए क्योंकि परिग्रह की मूच्छा समाप्त किए बिना अहिंसा का विकास सम्भव नहीं है । यह मूच्छा क्रमशः क्षीण हो सकती है यदि हम अपनी इच्छाएँ एवं आवश्यकताएँ सीमित करें, धन की सीमा करें। जिसस क्राइस्ट ने ठीक ही कहा है – *'ऊँट का सुई की नोक में प्रवेश करना सम्भव हो सकता है किन्तु एक परिग्रही (धनी) व्यक्ति स्वर्ग में प्रवेश नहीं कर सकता ।*

परिग्रह की मूच्छा अर्थात धन के प्रति आसक्ति के भाव को कम करना एक दुष्कर कार्य है । कोई भी व्यक्ति प्राप्त वस्तु न किसी अन्य को देना चाहता है और न उसका विभाजन पसन्द करता है । यही कारण है कि आज आर्थिक असमानता आसमान छू रही है । आर्थिक शोषण की पराकाष्ठा है । 1985 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा गरीबी पर आयोजित शिखर सम्मेलन असफल हो गया क्योंकि कोई भी विकसित देश दुनिया में गरीबी कम करने के लिए अपनी आय के एक प्रतिशत विसर्जन के लिए सहमत नहीं हो सका ।

## अपरिग्रह मूलक जीवन शैली : पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय संतुलन का आधार

व्यक्ति के रहन–सहन को हम जीवनशैली कहते हैं । इसमें व्यक्ति का कपड़ा पहनना, खान–पान, बोलना और अन्य व्यक्तियों के साथ उसका व्यवहार सम्मिलित है । चिकित्सकीय जगत में अब यह धारण पुष्ट हो गई है कि मनुष्य के रोगों का सम्बन्ध उसकी जीवन शैली से है । वर्तमान की भोग की संस्कृति विकास के साथ ही विनाश का कारण बन रही है । इसीलिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने हाल ही में घोषणा कर दी है कि यदि हम लोगों को वहनीय विकास (सस्टेनेबल डेवलपमेंट) की आचार संहिता में प्रशिक्षित करने में सफल नहीं होते हैं तो जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक स्तर पर तापमान बढ़ना) की समस्या इतनी उग्र हो सकती है कि आने वाले कुछ ही वर्षों में एशिया में करोड़ों लोग अकाल मृत्यु के शिकार हो सकते हैं ।

विलासितापूर्ण जीवन–शैली से पृथ्वी पर विद्यमान उर्जा के स्रोत सूख रहे हैं । साथ ही पेट्रोल एवं कोयले की निरन्तर बढ़ती खपत से ग्रीनहाउस गैसेज का उत्सर्जन इतना अधिक हो गया है कि पृथ्वी के सुरक्षा कवच (ओजोन की परत) में छेद बढ़ते जा रहे हैं । परिणामस्वरूप पृथ्वी के तापमान में निरन्तर वृद्धि हो रही है। अतिवृष्टि, सूखा, बाढ़, सुनामी से मानव अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा । अतः विकास के नाम पर होने वाले विनाश से बचने का एकमात्र उपाय है अपरिग्रह मूलक जीवन–शैली । यदि हम अकाल मृत्यु, असाध्य रोगों एवं कष्टपूर्ण जीवन से बचना चाहते हैं, तो वहनीय विकास (सस्टेनेबल डेवलपमेंट) का आदर्श नमूना अपनाना होगा, अपरिग्रह एवं अहिंसा मूलक वहनीय रहन–सहन (सस्टेनेबल लिविंग) की संस्कृति का वैश्विक अभियान प्रारम्भ करना होगा। अपरिग्रह मूलक जीवन–शैली के लिए भगवान महावीर के उपदेश के मुख्य तत्त्व हैं–

***1. सम्यक दर्शन :–*** हमारा चिंतन, दृष्टिकोण सही हो । सत्य के प्रति हमारी अटल आस्था हो । नैतिकता हमारे जीवन का आधार बने ।

***2. अनेकान्त :*** आग्रह मुक्त व्यवहार । एकान्त दृष्टिकोण ही संघर्ष का मूल है । सत्य के अनेक रूप हैं । आंशिक सत्य को पूर्ण सत्य मानने का आग्रह हमें असहिष्णु बनाता है, परिणामस्वरूप खूनी संघर्ष भी सम्भव है । सह–अस्तित्व एवं समन्वय के लिए अनेकान्त दर्शन रामबाण है ।

***3. अहिंसा :–*** केवल मुनियों के लिए पूर्ण अहिंसक जीवन सम्भव है । ग्रहस्थ अहिंसा के अणुव्रत का पालन करें, अर्थात निर्दोष प्राणी की हत्या न करने का व्रत लें । यदि इस पृथ्वी पर विद्यमान सभी लोग इस व्रत को ग्रहण कर लें, तो हम युद्ध एवं आतंकवाद पर हमेशा के लिए विजय प्राप्त कर सकते हैं।

***4. इच्छा परिमाण :–*** अपरिग्रह मूलक जीवन शैली के लिए यह जरूरी है कि हम अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण करें तथा 'संयम ही खलु जीवनम्' घोष में निहित भावनाओं को जीवन में उतारें । यह भी सही है कि इच्छा / कामना के बिना मनुष्य का विकास सम्भव नहीं है किन्तु हमें इच्छाओं पर नियन्त्रण करना भी आना चाहिए। कौनसी इच्छा का पालन किया जाए, उसके लिए विवेक का उपयोग होना जरूरी है। इच्छाएँ अगर सीमित होगी तो हमारी आवश्यकताएँ भी सहज रूप से सीमित होगी ।

***5. सम्यक आजीविका :–*** अपरिग्रह मूलक जीवन शैली का यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है । बिना आजीविका के ग्रहस्थ धर्म निभाना असम्भव है लेकिन आजीविका के लिए हमें सम्यक साधनों का ही प्रयोग करना चाहिए अर्थात ईमानदारी एवं प्रामाणिकता से ही आजीविका का अर्जन करना चाहिए ।

***6. धन की सीमा :–*** हर व्यक्ति को धन कमाने का अधिकार है और भौतिक सुख के लिए दौलत का भी अपना महत्त्व है लेकिन यह भी सत्य है कि दौलत से सुख प्राप्त नहीं हो सकता । अधिक दौलत दुःख का कारण बन सकती है । इसीलिए भगवान महावीर ने कहा कि धन की सीमा करो, सम्पत्ति की सीमा करो, भौतिक संसाधनों की सीमा करो । ऐसा करने पर समाज के वंचित लोगों के लिए संसाधन उपलब्ध हो सकेंगे ।

***7. आचारशुद्धि और व्यसन मुक्ति :–*** शुद्ध आचार और व्यसन मुक्त जीवन सामाजिक सौष्ठव के लिए बहुत जरूरी है। जिस व्यक्ति का आचार शुद्ध होता है और जो व्यसनों से मुक्त है, वह अपरिग्रह मूलक जीवन शैली का आदर्श नमूना है।

उपरोक्त सात आयामी आचार संहिता का व्यापक प्रचार होना चाहिए और बच्चों और छात्रों को इस आचार संहिता का पालन करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए । यदि ऐसा होता है तो हम अपने अस्तित्व के संकट से बच सकते हैं।

**– डॉ. सोहनलाल गांधी**
अंतर्राष्ट्रीय अध्यक्ष, अणुविभा
बी–402, नागर रेजिडेन्सी
केलगिरी रोड़, मालवीय नगर
जयपुर – 302 017